[2022] 13 एस.सी.आर. 250

यू.एन. कृष्णमूर्ति (अब दिवंगत) अपने वैधानिक उत्तराधिकारियों के माध्यम से

बनाम

ए. एम. कृष्णमूर्ति

(2022 की दीवानी अपील सं. 4703)

12 जुलाई, 2022

**[माननीय न्यायमूर्ति श्रीमती इन्दिरा बनर्जी एवं माननीय न्यायमूर्ति श्री ऋषिकेश रॉय]**

*विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 – धारा 16 (संशोधन से पूर्व, प्रभावी तिथि 1.10.2018) – निष्पादन हेतु तत्परता एवं इच्छा – विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष हेतु दोनों अवयव आवश्यक – विक्रय–अनुबंध के विशिष्ट निष्पादन का वाद – कुछ राशि अग्रिम रूप से अदा की गई, शेष राशि नियत समय के भीतर न चुकाना – अनुतोष प्रदान करना – न्यायोचित नहीं – निर्णय : अनुबंध के निष्पादन हेतु तत्परता और इच्छा के मध्य अंतर होता है, और विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष प्राप्त करने के लिए दोनों अवयव आवश्यक हैं। वादी को यह सिद्ध करना होता है कि पूरे समय, तथा वाद के अंतिम निर्णय तक, वह अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने हेतु तत्पर और इच्छुक था। केवल यह कहना या लिखित अभिकथन देना कि वह तत्पर और इच्छुक है, पर्याप्त नहीं है। प्रस्तुत मामले में, उत्तरदाता–वादी अपने अनुबंधीय दायित्व के निष्पादन हेतु तत्परता को अनुबंध के निष्पादन की तिथि से लेकर डिक्री की तिथि तक सिद्ध करने में विफल रहा, जो कि विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष प्रदान किए जाने की पूर्व शर्त है। उत्तरदाता ने शेष विक्रय–परिव्यय न्यायालय में उस तिथि से सात वर्ष बाद जमा किया, जिस तिथि तक विक्रय निष्पादित होना था। उसके पास अनुबंध के अपने हिस्से का दायित्व पूरा करने के लिए पर्याप्त धन उपलब्ध नहीं था। यह प्रमाण भी प्रस्तुत नहीं किया गया कि वह किस प्रकार या किन स्रोतों से निर्धारित समय के भीतर शेष विक्रय–परिव्यय अदा करने में सक्षम था। सात वर्ष के अंतराल के बाद शेष*

*राशि का पश्चात् किया गया जमा, उत्तरदाता की अनुबंधीय दायित्व के निर्वहन हेतु तत्परता स्थापित नहीं करता। उत्तरदाता विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष पाने का अधिकारी नहीं था, क्योंकि वह धनराशि उपलब्ध नहीं रखते हुए भी मात्र अपने हिस्से का अनुबंध पूरा करने की इच्छा रखता था। उच्च न्यायालय का आक्षेपित निर्णय तथा विचारण न्यायालय का डिक्री, दोनों निरस्त किए जाते हैं। अपीलकर्ताओं–प्रतिवादियों को निर्देश दिया जाता है कि वे उत्तरदाता को अर्जित धनराशि उसकी जमा की तिथि से लेकर वापसी की तिथि तक 7% वार्षिक ब्याज सहित लौटाएँ।*

*वाद – किसी अनुबंध के विशिष्ट निष्पादन हेतु – किसी राशि का अग्रिम भुगतान किया गया, शेष राशि नियत समयावधि के भीतर चुकाई जानी थी – निर्णय : किसी अनुबंध के विशिष्ट निष्पादन के वाद में, वादी पर यह दायित्व है कि वह अनुबंध के अधीन अपने दायित्वों के निष्पादन हेतु अपनी तत्परता और इच्छा को सिद्ध करे – जहाँ किसी राशि का अग्रिम भुगतान किया गया हो और शेष राशि को निर्धारित समयावधि के भीतर चुकाना आवश्यक हो, वहाँ वादी को यह दिखाना होता है कि वह शेष धनराशि चुकाने की स्थिति में था – वादी को यह सिद्ध करना होता है कि उसके पास धन उपलब्ध था या वैकल्पिक रूप से उसने धन प्राप्त करने हेतु आवश्यक व्यवस्था कर रखी थी।*

*वाद – विशिष्ट निष्पादन हेतु – वादी की सतत तत्परता और इच्छा – निर्णय : यहाँ तक कि प्रथम अपील में भी, प्रथम अपीलीय न्यायालय का यह दायित्व है कि वह यह परीक्षण करे कि क्या वादी की ओर से अनुबंध के निष्पादन हेतु सतत तत्परता और इच्छा विद्यमान थी।*

**अपील को स्वीकार करते हुए,**

**न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया : 1.1 निर्धारण के लिए मुख्य प्रश्न यह है कि क्या उत्तरदाता वादी ने यह सिद्ध किया है कि वह अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तत्पर एवं इच्छुक था या नहीं? किसी अनुबंध के विशिष्ट निष्पादन के वाद में, वादी पर**

यह दायित्व है कि वह अनुबंध के अधीन अपने दायित्वों के निष्पादन हेतु अपनी तत्परता और इच्छा सिद्ध करे। जहाँ किसी राशि का अग्रिम भुगतान किया गया हो और शेष राशि को निर्धारित समयावधि के भीतर चुकाना आवश्यक हो, वहाँ वादी पर यह दायित्व है कि वह यह प्रदर्शित करे कि वह शेष धनराशि चुकाने की स्थिति में था। वादी को यह सिद्ध करना होता है कि उसके पास धन उपलब्ध था या उसने वैकल्पिक रूप से धन प्राप्त करने हेतु आवश्यक व्यवस्था की थी। इस मामले में, मूल प्रतिवादी/अपीलकर्ताओं ने निरंतर यह प्रतिपादित किया कि वादी उत्तरदाता ने न तो भुगतान की पेशकश की और न ही वह 15,00,000 रुपये की शेष विचारणीय राशि चुकाने की स्थिति में था। [कंडिका 21, 22][260-एफ–एच]

1.2 विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 16 (ग) उस व्यक्ति के पक्ष में किसी अनुबंध के विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष को प्रतिबंधित करती है, जो अपने अनुबंधीय दायित्व के निष्पादन हेतु अपनी तत्परता और इच्छा का अभिकथन तथा प्रमाण करने में विफल रहता है। धारा 16 के खंड (ग) के स्पष्टीकरण (i) के दृष्टिगत, यह आवश्यक नहीं हो सकता कि वादी वास्तव में प्रतिवादी को धन की पेशकश करे या न्यायालय में धन जमा करे, सिवाय इसके कि न्यायालय द्वारा ऐसा निर्देश दिया जाए, ताकि वह किसी ऐसे अनुबंध की आवश्यक शर्तों के निष्पादन हेतु अपनी तत्परता और इच्छा सिद्ध कर सके, जिसमें धन का भुगतान शामिल है। तथापि, स्पष्टीकरण (ii) कहता है कि वादी को अनुबंध के वास्तविक निर्माण के अनुसार उसके निष्पादन अथवा उसके निष्पादन हेतु तत्परता और इच्छा का अभिकथन करना चाहिए। किसी अनुबंध की शर्तों के अनुसार धन भुगतान के दायित्व का निष्पादन करने की तत्परता और इच्छा का अभिकथन तथा प्रमाण करने हेतु, वादी को वाद–पत्र में विशिष्ट अभिकथन करने होंगे और साक्ष्य प्रस्तुत करना होगा कि अनुबंध की शर्तों के अनुसार समय पर भुगतान करने के लिए धन उपलब्ध था। अन्य शब्दों में, वादी को यह अभिकथन करना होगा कि उसके पास पर्याप्त धन था या वह समय पर धन उपलब्ध कराने की स्थिति में था ताकि वह अनुबंध के अधीन अपने दायित्व का निर्वहन कर सके। यदि

वादी के पास अनुबंध की शर्तों के अनुसार, जिसमें धन का भुगतान शामिल है, अपने दायित्वों का निर्वहन करने हेतु पर्याप्त धन उपलब्ध नहीं है, तो वादी को विशेष रूप से यह अभिकथन करना होगा कि धन उसके लिए कैसे उपलब्ध होगा। उदाहरणार्थ, वादी यह अभिकथन कर सकता है और साक्ष्य प्रस्तुत करके सिद्ध कर सकता है कि किसी वित्तदाता के साथ उसके द्वारा पर्याप्त धनराशि के वितरण की ऐसी व्यवस्था की गई थी, जिससे धन–भुगतान से सम्बंधित अनुबंध की शर्तों का समय पर पालन किया जा सके। [कंडिका 24, 25][261-एफ–एच; 262-ए–सी]

1.3 किसी अनुबंध के विशिष्ट निष्पादन के वाद में, न्यायालय को स्वयं से निम्नलिखित प्रश्न पूछने होते हैं, अर्थात्:- (i) क्या विक्रेता और क्रेता दोनों पर बाध्यकारी कोई वैध विक्रय अनुबंध है और (ii) क्या वादी सदैव से तथा अब भी, विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 16(क) के अधीन परिकल्पित अनुसार, अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तत्पर और इच्छुक है। अनुबंध के निष्पादन के लिए तत्परता और इच्छा के बीच अंतर होता है और विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष हेतु दोनों अवयव आवश्यक हैं। यहाँ तक कि प्रथम अपील में भी, प्रथम अपीलीय न्यायालय का यह दायित्व होता है कि वह यह परीक्षण करे कि क्या वादी की ओर से अनुबंध के निष्पादन हेतु सतत तत्परता और इच्छा विद्यमान थी। [कंडिका 33-35][265-बी–ई]

1.4 इस मामले में, वाद–वस्तु औद्योगिक नगर होसुर में स्थित है, जो बैंगलुरु से लगभग 30/40 किलोमीटर दूर है। न्यायालय पर यह दायित्व है कि वह होसुर में अचल संपत्ति के मूल्य में हुए विलक्षण वृद्धि का न्यायिक संज्ञान ले। यह तर्क दिया गया कि वादी ने 15,10,000 रुपये के विचारणीय मूल्य में से केवल 10,001 रुपये की नगण्य राशि अग्रिम के रूप में अदा की थी। नगण्य राशि का भुगतान करने के बाद वादी विशिष्ट निष्पादन की विवेकाधीन न्यायसंगत अनुतोष पाने का अधिकारी नहीं था। यह तथ्य कि वाद तीन वर्षों के बाद, परिसीमा अवधि समाप्त होने से ठीक पहले दायर किया गया, भी उत्तरदाता वादी को

अचल संपत्ति की खरीद हेतु विशिष्ट निष्पादन की न्यायसंगत अनुतोष से वंचित करने का एक आधार था। उत्तरदाता वादी ने 13.02.2003 की नोटिस तथा अ. सा.2 और अ. सा.3 के साक्ष्यों पर अवलंबन किया यह सिद्ध करने हेतु कि वह सदैव अनुबंध के अपने हिस्से के निष्पादन के लिए तत्पर और इच्छुक था। यद्यपि यह सत्य हो सकता है कि उत्तरदाता वादी ने शेष विक्रय–परिव्यय को 06.04.2010 को न्यायालय में जमा किया था, यह तथ्य उपेक्षित नहीं किया जा सकता कि यह जमा उसके द्वारा 15.3.2003 के सात वर्षों बाद किया गया, जो वह तिथि थी जिसके भीतर विक्रय संपन्न होना था। उत्तरदाता वादी की ओर से यह कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया कि उत्तरदाता वादी किस प्रकार शेष विक्रय–परिव्यय का भुगतान करने या उसकी व्यवस्था करने की स्थिति में था। निम्न न्यायालयों ने भी इस महत्वपूर्ण मुद्दे का निर्णय करने में त्रुटि की, सिवाय इसके कि उन्होंने यह व्यापक टिप्पणी की कि, चूँकि उत्तरदाता वादी एक व्यवसायी था, उसके पास शेष धनराशि की व्यवस्था करने के स्रोत थे। 31.03.2003 की उत्तरदाता वादी की बैलेंस शीट का सावधानीपूर्वक अध्ययन यह प्रदर्शित करेगा कि उसके पास अनुबंध के अपने हिस्से का दायित्व पूरा करने हेतु पर्याप्त धन नहीं था। [कंडिका 38-40, 45][267-सी–ई; 268-ई]

1.5 विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष के लिए, वादी को यह सिद्ध करना होता है कि वह पूरे समय और वाद के अंतिम निर्णय तक अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तैयार और इच्छुक था। वादी का यह अनिवार्य दायित्व है कि वह साक्ष्य प्रस्तुत करके अपनी तत्परता और इच्छा को सिद्ध करे। इस महत्वपूर्ण पहलू का निर्धारण सभी परिस्थितियों पर विचार करके किया जाना होता है, जिनमें धन की उपलब्धता भी शामिल है, और केवल वाद–पत्र में तत्परता और इच्छा का कथन या अभिकथन पर्याप्त नहीं होता। इस मामले में, उत्तरदाता वादी अपने हिस्से के अनुबंधीय दायित्व को पूरा करने हेतु अपनी तत्परता और इच्छा को ठोस साक्ष्य प्रस्तुत करके सिद्ध करने के अपने दायित्व का निर्वहन करने में विफल रहा है। उसकी तत्परता और इच्छा सिद्ध करने के लिए स्वीकार्य साक्ष्य

अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं किए गए हैं। आगे, उत्तरदाता वादी की बैलेंस शीट से यह स्पष्ट है कि मार्च 2003 में उसके पास अनुबंध के अपने हिस्से के दायित्व का निर्वहन करने हेतु पर्याप्त धन उपलब्ध नहीं था। सात वर्षों के अंतराल के बाद शेष विचारणीय राशि का किया गया पश्चात जमा, उत्तरदाता वादी की अपने अनुबंधीय दायित्व के निर्वहन हेतु तत्परता स्थापित नहीं करता। उत्तरदाता वादी अनुबंध के निष्पादन की तिथि से लेकर डिक्री की तिथि तक अपनी तत्परता सिद्ध करने में विफल रहा है, जो कि विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष प्रदान करने की पूर्व शर्त है। उत्तरदाता वादी विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष पाने का अधिकारी नहीं था। उत्तरदाता वादी संभवतः अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए इच्छुक रहा होगा। तथापि, ऐसा प्रतीत होता है कि वह धनराशि के साथ तैयार नहीं था। वह संभवतः अपने अनुबंधीय दायित्व के निर्वहन के लिए समय प्राप्त करने का प्रयास कर रहा था। उत्तरदाता वादी विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष पाने का अधिकारी नहीं था। विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने इस प्रकार की अनुतोष प्रदान करने में विधि और तथ्य दोनों में त्रुटि की है। उच्च न्यायालय का आक्षेपित निर्णय तथा विचारण न्यायालय का निर्णय और डिक्री निरस्त किए जाते हैं। अपीलकर्ता उत्तरदाता वादी को अर्जित धनराशि आज से चार सप्ताह के भीतर 7% वार्षिक ब्याज की दर से, उसकी जमा की तिथि से लेकर वापसी की तिथि तक, लौटा देंगे। उत्तरदाता वादी के लिए यह भी खुला रहेगा कि वह न्यायालय में जमा शेष विचारणीय राशि, यदि कोई हो, निकाल सके। [कंडिका 46-49, 51 और 52][271-डी–जी; 272-बी–सी, जी]

*भव्यनाथ बनाम के. वी. बालन,* (2020) 11 एससीसी 790 — अनुप्रयोज्य नहीं अभिनिर्धारित।

*मन कौर बनाम हरतर सिंह संघा* (2010) 10 एस.सी.सी. 512 : [2010] 12 एस.सी.आर. 515; *पं. प्रेम राज बनाम डी.एल.एफ. हाउसिंग एंड कंस्ट्रक्शन (प्राइवेट) लिमिटेड तथा अन्य* ए.आई.आर.

**1968 एस.सी. 1355 : [1968] 3 एस.सी.आर. 648;** *एन. पी. थिरुग्नानम बनाम डॉ. आर. जगन मोहन राव तथा अन्य* **(1995) 5 एस.सी.सी. 115 : [1995] 2 सप्ली. एस.सी.आर. 53;** *उमा बाई बनाम नीलकंठ धोण्डिबा चव्हाण* **(2005) 6 एस.सी.सी. 243 : [2005] 3 एस.सी.आर. 521;** *के.एस. विद्यानदम बनाम वैरवन* **(1997) 3 एस.सी.सी. 1 : [1997] 1 एस.सी.आर. 993;** *हिज होलीनेस आचार्य स्वामी गणेश दासजी बनाम सीताराम ठापर* **(1996) 4 एस.सी.सी. 526 : [1996] 2 सप्ली. एस.सी.आर. 111;** *कलावती बनाम राकेश कुमार* **(2018) 3 एस.सी.सी. 658 : [2018] 1 एस.सी.आर. 482;** *बलराज तनेजा बनाम सुनील मदान* **(1999) 8 एस.सी.सी. 396 : [1999] 2 सप्ली. एस.सी.आर. 258;** *एच.पी. प्यारेजन बनाम दासप्पा* **(2006) 2 एस.सी.सी. 496 : [2006] 2 एस.सी.आर. 120;** *मलुरु मल्लप्पा बनाम कुरुवतप्पा* **(2020) 4 एस.सी.सी. 313;** *सरदामणि कंडप्पन बनाम एस. राजलक्ष्मी* **(2011) 12 एस.सी.सी. 18 : [2011] 8 एस.सी.आर. 874;** *पी.आर. देब एंड एसोसिएट्स बनाम सुनंदा रॉय* **(1997) 3 एस.सी.सी. 1;** *मंजुनाथ आनंदप्पा बनाम तम्मनासा* **(2003) 10 एस.सी.सी. 390 : [2003] 2 एस.सी.आर. 1068**; *अज़हर सुल्ताना बनाम बी. राजमणि* **(2009) 17 एस.सी.सी. 27 : [2009] 2 एस.सी.आर. 537;** *अत्मा राम बनाम चरनजीत सिंह* **(2020) 3 एस.सी.सी. 311 : [2020] 3 एस.सी.आर. 697** – अवलंबन किया गया।

*अर्देशीर मामा बनाम फ्लोरा सासून* **55 आई.ए. 300, पृ. 372 : ए.आई.आर. 1928 पी.सी. 208**; *कॉर्ट बनाम एम्बरगेट आदि एंड रेलवे कंपनी* **(1851) 117 ई.आर. 1229 – का उल्लेख किया गया।**

**न्यायदृष्टांत संदर्भ**

| | | |
|---|---|---|
| **[2010] 12 एससीआर 515** | **अवलंबन किया गया** | **कंडिका 26** |
| **[1968] 3 एससीआर 648** | **अवलंबन किया गया** | **कंडिका 27** |
| **[1995] 2 अनुपूरक एससीआर 53** | **अवलंबन किया गया** | **कंडिका 29** |
| **[2005] 3 एससीआर 521** | **अवलंबन किया गया** | **कंडिका 31** |
| **[1997] 1 एससीआर 993** | **अवलंबन किया गया** | **कंडिका 32** |
| **[1996] 2 अनुपूरक एससीआर 111** | **अवलंबन किया गया** | **कंडिका 34** |
| **[2018] 1 एससीआर 482** | **अवलंबन किया गया** | **कंडिका 34** |
| **[1999] 2 अनुपूरक एससीआर 258** | **अवलंबन किया गया** | **कंडिका 35** |
| **[2006] 2 एससीआर 120** | **अवलंबन किया गया** | **कंडिका 36** |
| **[2011] 8 एससीआर 874** | **अवलंबन किया गया** | **कंडिका 39** |
| **[2003] 2 एससीआर 1068** | **अवलंबन किया गया** | **कंडिका 40** |
| **[2009] 2 एससीआर 537** | **अवलंबन किया गया** | **कंडिका 40** |
| **[2020] 3 एससीआर 697** | **अवलंबन किया गया** | **कंडिका 44** |
| **(2020) 11 एससीसी 790** | **अनुप्रयोज्य नहीं अभिनिर्धारित** | **कंडिका 50** |

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार : 2022 की दीवानी अपील सं. 4703

मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा 2011 की अपील वाद सं. 262 में दिनांक 30.10.2017 को पारित निर्णय एवं आदेश से उद्भूत।

अपीलकर्ताओं की ओर से: कृष्णन वेंगुपाल, शशिकिरण शेट्टी, वरिष्ठ अधिवक्ता, महेश ठाकुर, सुश्री विपाशा सिंह, अधिवक्ता।

उत्तरदाता की ओर से: एन. डी. बी. राजू, एम. ए. चिन्नासामी, सुश्री सी. रुबावथी, सी. लीला सर्वेश्वर, टी. मयिक्कंदन, पी. राजाराम, वी. सैंथिल कुमार, अधिवक्ता।

न्यायालय का निर्णय

**माननीय न्यायमूर्ति श्रीमती इन्दिरा बनर्जी द्वारा प्रदत्त।**

अनुमति प्रदान की गई।

2. अपीलकर्ताओं की ओर से श्री महेश ठाकुर, एओआर के साथ उपस्थित श्री कृष्णन वेणुगोपाल, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता तथा उत्तरदाता की ओर से श्री एम.ए. चिन्नासामी, एओआर के साथ उपस्थित श्री एन.डी.बी. राजू, विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

3. यह अपील, मद्रास स्थित न्यायिक उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 30 अक्टूबर 2017 को पारित अंतिम निर्णय एवं डिक्री के विरुद्ध है, जिसके द्वारा अपीलकर्ताओं द्वारा संस्थित 2011 की अपील वाद संख्या 262 को खारिज कर दिया गया तथा उत्तरदाता-वादी द्वारा वादग्रस्त संपत्ति के विक्रय के लिए किए गए करार के विनिर्दिष्ट पालन हेतु संस्थित 2005 के मूल वाद संख्या 30 में कृष्णागिरि के प्रधान जिला न्यायाधीश द्वारा, जिन्हें इसमें आगे "विचारण न्यायालय" कहा गया है, दिनांक 30 नवम्बर 2010 को पारित निर्णय, आदेश एवं डिक्री की पुष्टि की गई।

4. वाद–पत्र में यह अभिकथित किया गया है कि मूल प्रतिवादी यू.एन. कृष्णमूर्ति के पिता यू.आर. नरसैया द्वारा लगभग 9 मई 1984 को एक वसीयत निष्पादित की गई थी, जिसके द्वारा वाद–वस्तु को मूल प्रतिवादी यू.एन. कृष्णमूर्ति (अब दिवंगत) को विरासत में दे दिया गया। अपने पिता यू.आर. नरसैया की 25 अप्रैल 1987 को मृत्यु के पश्चात मूल प्रतिवादी यू.एन. कृष्णमूर्ति वाद–वस्तु के पूर्ण स्वामी बन गए।

5. अपीलकर्ताओं का मामला यह है कि दिनांक 11 नवम्बर 2002 को, जब मूल प्रतिवादी वादग्रस्त संपत्ति में सफेदी करा रहा था, तब श्री एन. अंजप्पा नामक एक भू-संपदा

अभिकर्ता ने मूल प्रतिवादी से संपर्क किया और वादग्रस्त संपत्ति को अच्छे मूल्य पर विक्रय कराने की व्यवस्था करने का प्रस्ताव दिया।

6. वाद–पत्र में किए गए अभिकथनों के अनुसार, मूल प्रतिवादी ने उत्तरदाता वादी को, श्री एन. अंजप्पा, श्री एस.ए. मुरलीधरन तथा श्री एम. मुरली रेड्डी की उपस्थिति में, वाद–वस्तु को बेचने पर सहमति व्यक्त की। वाद–वस्तु की विक्रय–सहमति की शर्तें एवं परिस्थितियाँ मूल प्रतिवादी यू.एन. कृष्णमूर्ति द्वारा अपने हस्तलेख में 11 नवम्बर 2002 दिनांकित पत्र में लिखी गईं, जिसे मूल प्रतिवादी ने उत्तरदाता वादी को दिया था।

7. उत्तरदाता वादी का मामला यह है कि मूल प्रतिवादी ने वाद–वस्तु को उत्तरदाता वादी को 15,10,000 रुपये के विचारणीय मूल्य पर बेचने पर सहमति व्यक्त की, जिसमें से 10,001 रुपये की राशि उत्तरदाता वादी द्वारा मूल प्रतिवादी को अग्रिम के रूप में अदा की गई थी। पक्षकारों के बीच आगे यह भी सहमति हुई थी कि उत्तरदाता वादी सम्पूर्ण विचारणीय राशि का भुगतान करके 15 मार्च 2003 या उससे पूर्व विक्रय–विलेख का पंजीकरण करवा लेगा। यह भी आरोप है कि उक्त सहमति रियल एस्टेट एजेंट श्री एन. अंजप्पा द्वारा साक्ष्यित की गई थी।

8. उत्तरदाता वादी के अनुसार, उत्तरदाता वादी ने कई बार मूल प्रतिवादी के पास जाकर शेष विचारणीय राशि की पेशकश की और मूल प्रतिवादी से उसके पक्ष में विक्रय–विलेख निष्पादित करने का अनुरोध किया, किन्तु मूल प्रतिवादी एक न एक बहाने से विक्रय–विलेख के निष्पादन को टालते रहे।

9. लगभग 13 फरवरी 2003 को, उत्तरदाता वादी ने अपने अधिवक्ता के माध्यम से मूल प्रतिवादी को एक विधिक नोटिस जारी किया, जिसमें यह कहा गया कि उत्तरदाता वादी अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए सदैव तैयार और इच्छुक है तथा मूल प्रतिवादी को शेष विचारणीय राशि प्राप्त कर उत्तरदाता वादी के पक्ष में विक्रय–विलेख निष्पादित करने का आह्वान किया गया। उपर्युक्त विधिक नोटिस के उत्तर में भेजे गए 10 मार्च

2003 दिनांकित पत्र द्वारा, मूल प्रतिवादी ने वाद–वस्तु के संबंध में किसी मौखिक विक्रय–सहमति में प्रविष्ट होने से इन्कार कर दिया।

10. 8 अक्टूबर 2005 को, उत्तरदाता वादी ने कथित रूप से मूल प्रतिवादी के पास जाकर शेष विचारणीय राशि प्राप्त करने तथा उत्तरदाता वादी के पक्ष में विक्रय–विलेख निष्पादित करने का अनुरोध किया। यह आरोप है कि मूल प्रतिवादी ने अपने वादे से मुकरते हुए, उत्तरदाता वादी द्वारा किए गए अनुरोध को मानने से इन्कार कर दिया।

11. इन परिस्थितियों में, लगभग 17 अक्टूबर 2005 को, उत्तरदाता वादी ने वाद दायर किया। मूल प्रतिवादी ने वाद–पत्र में किए गए आरोपों का खंडन करते हुए एक लिखित बयान दायर किया। लिखित बयान में, मूल प्रतिवादी ने यह भी खंडित किया कि उसने वाद–वस्तु को 15,10,000 रुपये के विचारणीय मूल्य पर बेचने के लिए किसी भी विक्रय–सहमति का निष्पादन किया था, जैसा कि आरोप लगाया गया है।

12 . मूल प्रतिवादी ने स्पष्ट रूप से कहा कि उसने आरोप के अनुसार उत्तरदाता वादी को वाद–वस्तु बेचने की कोई सहमति नहीं दी थी और न ही उसने 11 नवम्बर 2002 को या किसी अन्य तिथि को कोई अग्रिम राशि प्राप्त की थी, जैसा कि कहा गया है। अपीलकर्ताओं का मामला यह है कि वाद–वस्तु को बेचने के लिए कोई निष्पन्न अनुबंध अस्तित्व में नहीं था। लिखित बयान में यह भी अभिकथित किया गया है कि किसी भी स्थिति में, उत्तरदाता वादी कभी भी अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तैयार या इच्छुक नहीं था।

13. विचारण न्यायालय ने निम्नलिखित मुद्दों का निर्माण किया:–

*"1. क्या नवम्बर 2002 के प्रथम सप्ताह में मौखिक विक्रय–सहमति सत्य है?*

*2. क्या कथित 11.11.2002 दिनांकित पुष्टि–पत्र सत्य एवं वैध है?*

*3. क्या वादी और प्रतिवादी के बीच कोई निष्पन्न अनुबंध नहीं है — यह सत्य है?*

*4. क्या वादी सदैव अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने हेतु तैयार और*

*इच्छुक रहा है?*

*5. क्या वादी विशिष्ट निष्पादन और कब्जे की अनुतोष पाने का अधिकारी है?*

*6. वादी किस प्रकार की अनुतोष पाने का अधिकारी है?"*

14. उत्तरदाता वादी ने तीन साक्षियों का परीक्षण कराया और मूल प्रतिवादी ने अपने पक्ष में स्वयं साक्ष्य दिया। 30 नवम्बर 2010 को पारित निर्णय एवं आदेश द्वारा, विचारण न्यायालय ने वाद डिक्री कर दिया और मूल प्रतिवादी को यह निर्देश दिया कि वह 15 लाख रुपये की शेष विक्रय–परिव्यय राशि प्राप्त कर उत्तरदाता वादी के पक्ष में विक्रय–विलेख निष्पादित करे।

15. विचारण न्यायालय द्वारा निर्मित सभी मुद्दों का उत्तर उत्तरदाता वादी के पक्ष में दिया गया। विचारण न्यायालय ने यह पाया कि उत्तरदाता वादी अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तैयार और इच्छुक था, और इस प्रकार वह विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष का अधिकारी था। विचारण न्यायालय के निर्णय का प्रासंगिक भाग निम्नलिखित है:–

*"21. परन्तु मैंने पहले ही चर्चा की है कि वादी एक व्यवसायी है और उसके पास प्रतिवादी को 15,00,000/- रुपये का भुगतान करने के लिए पर्याप्त साधन हैं तथा उक्त राशि न्यायालय में भी जमा कर दी गई है। यह तथ्य कि उक्त राशि प्रदर्श ए-4 से ए-6 में प्रदर्शित नहीं की गई है, प्रार्थना को अस्वीकार करने का आधार नहीं है। वादी अपनी संविदा का पालन करने के लिए भी तत्पर एवं इच्छुक है और उपर्युक्त चर्चाओं के दृष्टिगत, वादी विनिर्दिष्ट पालन तथा अनुसूचीबद्ध संपत्ति के कब्जे के अनुतोष का हकदार है। तदनुसार, मैं मुद्दा संख्या 4 और 5 का उत्तर देता हूँ।"*

16. आक्षेपित निर्णय एवं आदेश दिनांक 30 अक्टूबर 2017 द्वारा, उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय एवं डिक्री को इस आधार पर बरकरार रखा कि

उत्तरदाता वादी सदैव अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तैयार और इच्छुक रहा है। आक्षेपित निर्णय एवं आदेश का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:—

*"18. दिनांक 11.11.2002 के पत्र को प्रदर्श ए-1 के रूप में चिह्नित किया गया है। प्रदर्श ए-1 में निबंधित विक्रय विलेख के निष्पादन के लिए अवधि निर्धारित की गई है। वादी का सतत मामला यह है कि बार-बार की गई मांगों के बावजूद प्रतिवादी वादी के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए आगे नहीं आया और इसलिए एक विधिक सूचना जारी की गई। प्रदर्श ए-2 दिनांक 13.02.2003 की विधिक सूचना की प्रति है और वह प्रतिवादी द्वारा प्राप्त भी की गई थी। उसे प्राप्त करने के पश्चात उसने दिनांक 10.03.2003 की एक मिथ्या प्रत्युत्तर सूचना दी। चूँकि वादी की ओर से आवश्यक दस्तावेजी एवं मौखिक साक्ष्य प्रस्तुत किए गए हैं, इसलिए यह सहज रूप से परिलक्षित होता है कि वादी अपनी संविदा के भाग का पालन करने के लिए सदैव तत्पर एवं इच्छुक रहा है। अतः अपीलकर्ताओं/प्रतिवादीगण की ओर से प्रस्तुत चौथा तर्क भी गुण-दोषरहित होने के कारण अस्वीकार्य हो जाता है।*

*...*

*20. यह पहले ही विस्तारपूर्वक चर्चा की जा चुकी है कि वादग्रस्त संपत्ति प्रतिवादी की पूर्ण स्वामित्वाधीन संपत्ति है। प्रतिवादी (व. सा.1) द्वारा दिए गए साक्ष्य से न्यायालय भली-भाँति इस निष्कर्ष पर पहुँच सकता है कि संपूर्ण संव्यवहार वादी और प्रतिवादी के मध्य हुई मौखिक विक्रय संविदा पर आधारित है। इसके अतिरिक्त, वादी ने अपनी संविदा के भाग का पालन करने हेतु अपनी तत्परता एवं इच्छा प्रदर्शित की है। अतः किसी भी दृष्टिकोण से देखने पर अपीलकर्ताओं/प्रतिवादीगण की ओर से प्रस्तुत तर्क स्वीकार नहीं किए जा सकते।"*

17. अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री कृष्णन वेंगुपाल ने तर्क दिया कि विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय — दोनों ने — तथ्यों के साथ-साथ

विधि में भी त्रुटि की है। उनके अनुसार, उत्तरदाता वादी की ओर से "तत्परता और इच्छा" से संबंधित मुद्दे का निम्न न्यायालयों द्वारा समुचित मूल्यांकन नहीं किया गया। विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 16(क) पर बल देते हुए, श्री वेंगुपाल ने प्रस्तुत किया कि उत्तरदाता वादी ने निरंतर "तत्परता और इच्छा" प्रदर्शित करने के लिए कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया, जबकि उत्तरदाता वादी पर यह दायित्व था कि वह इसे सिद्ध करे — चाहे मूल प्रतिवादी द्वारा कोई चूक हुई हो या नहीं। श्री वेंगुपाल ने यह भी तर्क दिया कि विशिष्ट निष्पादन जैसी विवेकाधीन अनुतोष प्रदान करने से पूर्व न्यायालय को अचल संपत्ति के मूल्यों में हुई तीव्र वृद्धि का न्यायिक संज्ञान भी लेना चाहिए।

18. उत्तरदाता वादी की ओर से उपस्थित श्री एन.डी.बी. राजू ने प्रस्तुत किया कि विचारण न्यायालय द्वारा निर्मित यह मुद्दे — कि क्या वादी और प्रतिवादी के बीच कोई निष्पन्न अनुबंध था, तथा क्या वादी सदैव अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तैयार और इच्छुक था — ये तथ्यात्मक मुद्दे थे, जिनका निर्धारण साक्ष्य के आधार पर किया जाना था।

19. श्री राजू ने तर्क दिया कि इस न्यायालय को विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा उत्तरदाता वादी की अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने की तत्परता और इच्छा के संबंध में दर्ज समवर्ती तथ्यात्मक निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

20. श्री राजू ने जोर देकर तर्क दिया कि उत्तरदाता वादी सदैव अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तैयार और इच्छुक था और मूल प्रतिवादी विक्रय–विलेख के निष्पादन में विलंब करता रहा। उत्तरदाता वादी की तत्परता और इच्छा सिद्ध करने के लिए, श्री राजू ने वादी के साक्षियों एन. अंजप्पा (अ. सा.2) और एस.ए. मुरलीधरन (अ. सा.3) की गवाही का उल्लेख किया, जिन्होंने यह कहा कि उत्तरदाता वादी ने कई अवसरों पर, 15.03.2003 की अंतिम तिथि से पूर्व, मूल प्रतिवादी से विक्रय–विलेख निष्पादित करने का अनुरोध किया था, परन्तु मूल प्रतिवादी विक्रय–विलेख के निष्पादन में विलंब करता रहा।

21. यह सुव्यवस्थित सिद्धांत है कि किसी विक्रय–सहमति के विशिष्ट निष्पादन के वाद में, वादी के लिए यह सिद्ध करना अनिवार्य है कि वह अनुबंध के अधीन अपनी बाध्यताओं का निष्पादन करने के लिए तत्पर और इच्छुक था। जहाँ कुछ राशि अग्रिम में अदा की गई हो और शेष राशि किसी निश्चित समय–सीमा के भीतर अदा की जानी हो, वहाँ वादी पर यह दायित्व होता है कि वह प्रदर्शित करे कि वह शेष राशि अदा करने की स्थिति में था। वादी को यह सिद्ध करना होता है कि उसके पास राशि उपलब्ध थी, या वैकल्पिक रूप से उसने राशि की व्यवस्था करने हेतु आवश्यक प्रबंध कर रखे थे। इस मामले में, मूल प्रतिवादी/अपीलकर्ताओं का निरंतर यह अभिकथन रहा है कि उत्तरदाता वादी न तो शेष 15,00,000 रुपये की विचारणीय राशि अदा करने की पेशकश करता था और न ही वह उसे अदा करने की स्थिति में था।

22. प्रमुख प्रश्न जिसका निर्धारण किया जाना है, यह है कि क्या उत्तरदाता वादी ने अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने की अपनी तत्परता और इच्छा सिद्ध की है या नहीं?

23. विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 16, जैसा कि प्रासंगिक समय पर (01.10.2018 से प्रभावी संशोधन से पूर्व) लागू थी, अन्य बातों के साथ–साथ निम्नलिखित प्रावधान करती है:–

*"**16. अनुतोष के प्रति व्यक्तिगत प्रतिषेध.**— किसी व्यक्ति के पक्ष में किसी अनुबंध का विशिष्ट निष्पादन प्रवर्तित नहीं किया जा सकता —*

*(क) जो उसके उल्लंघन के लिए प्रतिकर प्राप्त करने का अधिकारी न हो; या*

*(ख) जो अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने में अक्षम हो गया हो, अथवा अनुबंध की किसी भी आवश्यक शर्त का उल्लंघन करता हो, या अनुबंध के साथ छल करता हो, या उस संबंध के विपरीत अथवा उसके प्रतिकूल कार्य करता हो, जिसे अनुबंध द्वारा स्थापित किया जाना था; या*

*(ग) जो यह अभिकथित और सिद्ध करने में असफल रहता हो कि उसने अनुबंध की उन आवश्यक शर्तों का निष्पादन किया है या सदैव निष्पादन के लिए तैयार और इच्छुक रहा है, जिन्हें उसके द्वारा निष्पादित किया जाना है — उन शर्तों को छोड़कर जिनका निष्पादन प्रतिवादी द्वारा रोका गया हो या जिनसे प्रतिवादी ने छूट प्रदान की हो।*

*स्पष्टीकरण — उप–खंड (ग) के प्रयोजनों के लिए,—*

*(i) जहाँ किसी अनुबंध में धन–भुगतान सम्मिलित हो, वहाँ वादी के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह वास्तव में प्रतिवादी को धन अर्पित करे या न्यायालय में कोई धन जमा करे, जब तक कि न्यायालय ऐसा करने का निर्देश न दे;*

*(ii) वादी को अनुबंध के वास्तविक आशय के अनुसार अनुबंध के निष्पादन अथवा निष्पादन की तत्परता और इच्छा का अभिकथन करना आवश्यक है।"*

24. विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 16(ग) उन व्यक्तियों के पक्ष में अनुबंध के विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष को निषिद्ध करती है, जो अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने की अपनी तत्परता और इच्छा का अभिकथन तथा सिद्ध करने में विफल रहते हैं। धारा 16 के उप–खंड (ग) के स्पष्टीकरण (क) के आलोक में, वादी के लिए यह आवश्यक नहीं हो सकता कि वह प्रतिवादी को वास्तव में धन अर्पित करे या न्यायालय में धन जमा करे, जब तक कि न्यायालय ऐसा करने का निर्देश न दे, ताकि यह सिद्ध किया जा सके कि वह धन–भुगतान से संबंधित अनुबंध की आवश्यक शर्तों का निष्पादन करने के लिए तत्पर और इच्छुक है। तथापि, स्पष्टीकरण (ख) यह कहता है कि वादी को अनुबंध के वास्तविक आशय के अनुसार, अनुबंध के निष्पादन या उसके निष्पादन की तत्परता और इच्छा का अभिकथन करना आवश्यक है।

25. किसी अनुबंध की शर्तों के अनुसार धन–भुगतान की बाध्यता का निष्पादन करने की तत्परता और इच्छा का अभिकथन एवं सिद्ध करने के लिए, वादी को वाद–पत्र में विशिष्ट कथन करने होंगे और यह प्रदर्शित करने हेतु साक्ष्य प्रस्तुत करना होगा कि अनुबंध की शर्तों के अनुरूप समय पर भुगतान करने के लिए धन उपलब्ध था। अन्य शब्दों में, वादी को यह अभिकथित करना होगा कि उसके पास पर्याप्त धन था, या वह अपनी अनुबंधगत बाध्यता का निर्वहन करने के लिए समय पर धन की व्यवस्था करने की स्थिति में था। यदि वादी के पास किसी ऐसे अनुबंध की शर्तों के अनुसार, जिसमें धन–भुगतान अपेक्षित है, अपनी बाध्यताओं का निर्वहन करने हेतु पर्याप्त धन उपलब्ध न हो, तो वादी को यह विशेष रूप से अभिकथित करना होगा कि धन उसकी उपलब्धता में कैसे आएगा। उदाहरण के लिए, वादी साक्ष्य प्रस्तुत कर यह अभिकथित एवं सिद्ध कर सकता है कि उसने किसी वित्त–प्रदाता के साथ समयबद्ध अनुपालन हेतु पर्याप्त धन की उपलब्धता के लिए कोई व्यवस्था की थी, ऐसे अनुबंध की शर्तों एवं परिस्थितियों के अनुपालन हेतु जिसमें धन–भुगतान सम्मिलित हो।

26. **मन कौर बनाम हरतार सिंह सांगहा**[1] में, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि :

*"**40.** ..... कोई व्यक्ति, जो यह अभिकथित और सिद्ध करने में विफल रहता है कि उसने अनुबंध की उन आवश्यक शर्तों का निष्पादन किया है, या सदैव निष्पादन के लिए तैयार और इच्छुक रहा है, जिन्हें उसके द्वारा निष्पादित किया जाना है (उन शर्तों को छोड़कर जिनका निष्पादन प्रतिवादी द्वारा रोका गया हो या जिनसे छूट दी गई हो), वह विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष का दावा करने से वंचित रहता है। अतः, यह मान भी लिया जाए कि प्रतिवादी ने उल्लंघन किया, फिर भी यदि वादी वाद–पत्र में यह अभिकथित करने या सिद्ध करने में विफल रहता है कि वह अनुबंध की उन आवश्यक शर्तों का निष्पादन करने के लिए सदैव तैयार और इच्छुक था, जिन्हें उसके*

1 (2010) 10 एससीसी 512

*द्वारा निष्पादित किया जाना है (उन शर्तों को छोड़कर जिनका निष्पादन वादी द्वारा रोका गया हो या जिनसे छूट दी गई हो), तो उसके पक्ष में विशिष्ट निष्पादन पर प्रतिषेध लागू हो जाता है। अतः उत्तरदाता का यह अनुमान कि वादी की ओर से "तत्परता और इच्छा" ऐसी चीज़ है जिसे सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है, यदि वादी यह स्थापित कर दे कि प्रतिवादी ने विक्रय-विलेख निष्पादित करने से इन्कार कर दिया और इस प्रकार अनुबंध का उल्लंघन किया — यह अनुमान सही नहीं है। एक उदाहरण लेते हैं: मान लीजिए कि 10 लाख रुपये के विचारणीय मूल्य पर विक्रय-अनुबंध किया गया, तथा 1 लाख रुपये अग्रिम के रूप में अदा किए गए, और विक्रेता गलत रूप से विक्रय-विलेख निष्पादित करने से इन्कार कर देता है, जब तक कि क्रेता 15 लाख रुपये देने को तैयार न हो। ऐसे मामले में प्रतिवादी द्वारा स्पष्ट उल्लंघन है। परन्तु यदि उस स्थिति में वादी के पास शेष 9 लाख रुपये (और स्टाम्प शुल्क एवं पंजीकरण हेतु आवश्यक धन) उपलब्ध न हो, या वह ऐसे धन की व्यवस्था कर उसे अदा करने की क्षमता न रखता हो, जब अनुबंध का निष्पादन किया जाना था, तो प्रतिवादी द्वारा उल्लंघन सिद्ध हो जाने के बावजूद, वादी विशिष्ट निष्पादन पाने का अधिकारी नहीं होगा, क्योंकि वह अपनी बाध्यताओं का निष्पादन करने के लिए "तैयार और इच्छुक" नहीं था।"*

27. **पं. प्रेम राज बनाम डी.एल.एफ. हाउसिंग एंड कंस्ट्रक्शन (प्राइवेट) लिमिटेड एवं अन्य**[2], जिसका उल्लेख श्री वेंगुपाल द्वारा किया गया, में इस न्यायालय ने, न्यायमूर्ति रामास्वामी के माध्यम से बोलते हुए, यह प्रतिपादित किया कि "*यह सुव्यवस्थित है कि विशिष्ट निष्पादन के वाद में वादी को यह अभिकथित करना चाहिए कि वह अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तैयार और इच्छुक है.....*" और यदि इस तथ्य का प्रतिवाद किया जाए, तो वादी को अनुबंध की तिथि से लेकर सुनवाई के समय तक—अनुबंध

---

2 एआईआर 1968 एससी 1355

के अपने हिस्से का निष्पादन करने हेतु—निरंतर तत्परता और इच्छा सिद्ध करनी होती है। इस निष्कर्ष के लिए विद्वान न्यायाधीश ने लॉर्ड ब्लेन्सबरो द्वारा ***आर्देशीर मामा बनाम फ्लोरा ससून***[3] में व्यक्त मत पर अवलंबन किया।

28. ***डी.एल.एफ. हाउसिंग एंड कंस्ट्रक्शन (प्रा.) लिमिटेड*** *(उपरोक्त)* में, वाद–पत्र में वादी की ओर से इस अभिकथन के अभाव में कि वह अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तैयार और इच्छुक था, यह प्रतिपादित किया गया कि विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष के संदर्भ में वादी के पास कोई कारण–कार्रवाई नहीं था। इस मामले में, निःसंदेह, वाद–पत्र में यह अभिकथन है कि उत्तरदाता वादी अनुबंध के अधीन अपनी बाध्यताओं का निष्पादन करने के लिए सदैव तैयार और इच्छुक था। प्रश्न यह है कि क्या उत्तरदाता वादी ने अनुबंध के अधीन अपनी बाध्यताओं का निष्पादन करने की अपनी तत्परता और इच्छा सिद्ध की है?

29. ***एन.पी. तिरुग्नानम बनाम डॉ. आर. जगन मोहन राव एवं अन्य***[4] में, इस न्यायालय ने पुनः दोहराया कि विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 16(ग) यह परिकल्पना करती है कि वादी को यह अभिकथित एवं सिद्ध करना होगा कि उसने अनुबंध के उन आवश्यक निबंधनों का पालन किया था अथवा वह सदैव उनका पालन करने के लिए तत्पर एवं इच्छुक रहा है, जिनका पालन उसके द्वारा किया जाना था, उन निबंधनों से भिन्न जिनके पालन को प्रतिवादी द्वारा रोका गया हो अथवा जिनका प्रतिवादी द्वारा अधित्याग कर दिया गया हो। ***एन.पी. तिरुग्नानम*** (उपरोक्त) में इस न्यायालय ने कहा था कि वादी की ओर से निरंतर तत्परता एवं इच्छा, विनिर्दिष्ट पालन के अनुतोष के प्रदान किए जाने के लिए एक पूर्ववर्ती शर्त थी।

30. इस न्यायालय ने वास्तविक रूप से यह प्रतिपादित किया कि यह निर्धारित करने के लिए कि क्या वादी अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तैयार और

---

3 55 आईए 300, पृष्ठ 372 पर : एआईआर 1928 पीसी 208

4 (1995) 5 एससीसी 115

इच्छुक था, न्यायालय के लिए यह आवश्यक है कि वह विशिष्ट निष्पादन के वाद दायर किए जाने से पूर्व तथा बाद में, वादी के आचरण पर विचार करे। निर्णय का प्रासंगिक भाग नीचे उद्धृत है:-

*"5. ... अधिनियम की धारा 16(ग) यह अपेक्षित करती है कि वादी यह अभिकथित और सिद्ध करे कि उसने अनुबंध की उन आवश्यक शर्तों का निष्पादन किया है, या सदैव निष्पादन के लिए तैयार और इच्छुक रहा है, जिन्हें उसके द्वारा निष्पादित किया जाना है — उन शर्तों को छोड़कर जिनका निष्पादन प्रतिवादी द्वारा रोका गया हो या जिनसे उसे छूट दी गई हो। वादी की ओर से निरंतर तत्परता और इच्छा विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष प्रदान किए जाने की एक पूर्वापेक्षित शर्त है। यह परिस्थिति महत्वपूर्ण और प्रासंगिक है और न्यायालय द्वारा अनुतोष प्रदान करने या अस्वीकार करने के समय इसका विचार किया जाना आवश्यक है..."*

31. ***उमाबाई बनाम नीलकंठ धोंडिबा चव्हाण***[5] में, इस न्यायालय ने प्रतिपादित किया कि यह निष्कर्ष निकालना कि वादीगण सदैव और अब भी अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तैयार और इच्छुक थे, विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 16(ग) के अधीन एक अनिवार्य आवश्यकता है। न्यायालय को आवश्यक रूप से इस निष्कर्ष पर पहुँचना होता है कि वादीगण सदैव से, तथा अब भी, अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तैयार और इच्छुक हैं — और यह निष्कर्ष समस्त अभ्यावेदन तथा अभिलेख पर लाए गए साक्ष्यों को ध्यान में रखकर ही निकाला जाना चाहिए। इस न्यायालय के शब्द उद्धृत किए जाते हैं:-

*"जहाँ तक यह प्रश्न है कि वे अपने अनुबंधीय हिस्से का निष्पादन करने के लिए तैयार और इच्छुक थे — इसका अभिकथन वाद-पत्र में मौजूद है — हमें यह कहने में कोई हिचक नहीं कि यह मात्र अभिकथन ही विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की*

5 (2005) 6 एससीसी 243

*धारा 16(ग) के अर्थ में यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त नहीं है कि अपीलकर्ता तैयार और इच्छुक थे। इसके लिए न केवल ऐसा अभिकथन बल्कि उसका प्रमाण भी आवश्यक है। अब इन दोनों परिस्थितियों में पहली स्थिति की जाँच करते हुए — महज़ यह तथ्य कि यह वाद छूट मिलने के बाद दायर किया गया — स्वयं में वादी की तत्परता या इच्छा का संकेत कैसे हो सकता है? यह अधिकतम वादी की इस संपत्ति को प्राप्त करने की इच्छा को दर्शा सकता है। ऐसी इच्छा के लिए यह वाद दायर किया गया हो सकता है और ऐसा अभिकथन उठाया गया हो सकता है। परंतु धारा 16(ग) यह स्पष्ट करती है कि मात्र अभिकथन पर्याप्त नहीं है — इसका सिद्ध किया जाना भी अनिवार्य है।"*

32. ***के.एस. विद्यनादम बनाम वैरवन्***[6] में, न्यायमूर्ति बी.पी. जीवन् रेड्डी ने कहा कि विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष प्रदान करना विवेकाधीन है और न्यायालय इसे प्रदान करने के लिए बाध्य नहीं है। इस न्यायालय ने आगे यह भी प्रतिपादित किया कि यद्यपि संपत्ति के अंतरण से संबंधित अनुबंध में समय को मूल तत्व नहीं माना जाता, तथापि ऐसे अनुबंधों का एक उचित अवधि के भीतर पूर्ण होना आवश्यक है। अतः समय–तत्व को पूर्णतः नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता।

33. किसी अनुबंध के विशिष्ट निष्पादन के वाद में, न्यायालय को स्वयं से निम्नलिखित प्रश्न पूछने होते हैं, अर्थात्:–

(i) क्या विक्रेता और क्रेता — दोनों पर बाध्यकारी — कोई वैध विक्रय–सहमति विद्यमान है? और

(ii) क्या वादी सदैव से, और अब भी, विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 16(ग) के अधीन परिकल्पित अनुसार, अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तैयार और इच्छुक है?

---

6 (1997) 3 एससीसी 1

34. अनुबंध का निष्पादन करने की तत्परता और इच्छा — दोनों में अंतर है, और विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष के लिए दोनों अवयवों का होना आवश्यक है। ***परम पूज्य आचार्य स्वामी गणेश दासजी बनाम सीता राम ठप्पर***[7] जिसका उल्लेख श्री वेंगुपाल ने किया, में इस न्यायालय ने कहा कि अनुबंध के निष्पादन की तत्परता और इच्छा में अंतर है। तत्परता का अर्थ है वादी की अनुबंध का निष्पादन करने की क्षमता, जिसमें उसकी वित्तीय स्थिति भी शामिल है; जबकि इच्छा का संबंध वादी के आचरण से है। इसी दृष्टिकोण को इस न्यायालय ने ***कलावती बनाम राकेश कुमार***[8] में भी अपनाया।

35. यहाँ तक कि प्रथम अपील में भी, प्रथम अपीलीय न्यायालय का यह दायित्व होता है कि वह यह परीक्षण करे कि क्या वादी की ओर से अनुबंध के निष्पादन हेतु निरंतर तत्परता और इच्छा विद्यमान थी। यह सिद्धांत ***बलराज तनेजा बनाम सुनील मदन***[9] तथा ***एच.पी. प्यारेजन बनाम दासप्पा***[10] से समर्थित है, जहाँ इस न्यायालय ने ***आर्देशीर मामा बनाम फ्लोरा ससून***[11] में प्रिवी काउंसिल द्वारा ग्रहण किए गए दृष्टिकोण को अनुमोदित किया।

36. ***मल्लूरु मल्लप्पा बनाम कुरुवथप्पा***[12] में, इस न्यायालय ने निम्नानुसार प्रेक्षित एवं अभिनिर्धारित किया :

*"**13.** यह विधि का स्थिर सिद्धांत है कि अपील मूल न्यायालय की कार्यवाही की निरंतरता होती है। सामान्यतः, अपीलीय क्षेत्राधिकार कानून तथा तथ्य — दोनों पर पुनः सुनवाई को सम्मिलित करता है और किसी पीड़ित व्यक्ति द्वारा प्रयुक्त किया जाता है। प्रथम अपील अपीलकर्ता का एक मूल्यवान अधिकार है, और उसमें विचारण न्यायालय द्वारा निर्णयित सभी तथ्यात्मक एवं विधिक प्रश्नों का पुनर्मूल्यांकन खुला*

---

7 (1996) 4 एससीसी 526

8 (2018) 3 एससीसी 658

9 (1999) 8 एससीसी 396

10 (2006) 2 एससीसी 496

11 एआईआर 1928 पीसी 208

12 (2020) 4 एससीसी 313

*रहता है। अतः प्रथम अपीलीय न्यायालय के लिए आवश्यक है कि वह सभी मुद्दों पर विचार करे और कारण सहित निर्णय दे। प्रथम अपीलीय न्यायालय को अपने निष्कर्ष सभी विधिक एवं तथ्यात्मक मुद्दों तथा पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात ही दर्ज करने चाहिए। प्रथम अपीलीय न्यायालय का निर्णय स्पष्ट रूप से विचार-मंथन  दर्शाए, तथा सभी मुद्दों और तर्कों पर कारणों सहित निष्कर्ष दर्ज करे [देखें: संतोष हजारी बनाम पुरुषोत्तम तिवारी, (2001) 3 एस.सी.सी. 179; माधुकर बनाम संग्राम, (2001) 4 एस.सी.सी. 756; बी.एम. नारायण गौड़ा बनाम शांथमणा, (2011) 15 एस.सी.सी. 476 : (2014) 2 एस.सी.सी. (सिविल) 619; एच.के.एन. स्वामी बनाम इर्शाद बसीत, (2005) 10 एस.सी.सी. 243; तथा श्री राजा लक्ष्मी डाइंग वर्क्स बनाम रंगास्वामी चेट्टियार, (1980) 4 एस.सी.सी. 259 ]।*

***14.*** *दि॰प्र॰सं॰ की धारा 96 के अंतर्गत प्रथम अपील, धारा 100 के अंतर्गत द्वितीय अपील से पूर्णतः भिन्न होती है। धारा 100 स्पष्ट रूप से द्वितीय अपील को निषिद्ध करती है, जब तक कि वाद में कोई विधिक प्रश्न न हो और वह विधिक प्रश्न महत्वपूर्ण प्रकृति का न हो।"*

***

***18.*** *उपर्युक्त प्रावधानों तथा इस न्यायालय के निर्णयों से यह स्पष्ट है कि प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय में निर्धारण हेतु बिंदुओं को उल्लिखित करना, उन पर अपना निर्णय दर्ज करना, तथा अपने स्वतंत्र कारण प्रदान करना अनिवार्य है। यहाँ तक कि जब प्रथम अपीलीय न्यायालय विचारण न्यायालय के निर्णय की पुष्टि करता है, तब भी आदेश 41 नियम 31 की आवश्यकता का अनुपालन किया जाना अपेक्षित है, और इस आवश्यकता का पालन न करना प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय में दोष उत्पन्न करता है।निस्संदेह, जब अपीलीय न्यायालय साक्ष्यों के आधार पर*

*विचारण न्यायालय के दृष्टिकोण से सहमत होता है, तब उसे साक्ष्यों के प्रभाव को पुनः प्रस्तुत करने या विचारण न्यायालय द्वारा प्रदान किए गए कारणों को दोहराने की आवश्यकता नहीं होती। विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों के साथ सामान्य सहमति व्यक्त करना सामान्यतः पर्याप्त होता है।*

37. ***एच.पी. प्यारेजन बनाम दासप्पा*** (उपरोक्त) में, न्यायमूर्ति अरिजीत पसायत ने इस न्यायालय की ओर से बोलते हुए उच्च न्यायालय के निर्णय को पलट दिया, यह कहते हुए कि उच्च न्यायालय ने इस निष्कर्ष के लिए कोई कारण नहीं दिया कि वादी अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तैयार और इच्छुक था। इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए न्यायालय ने ***न्यायालय बनाम एम्बरगेट आदि एंड रेलवे कंपनी***[13]**,** पर अवलंबन किया, जहाँ लॉर्ड कैंपबेल ने यह अवलोकित किया था कि सामान्य बुद्धि के अनुसार, तत्परता और इच्छा के ऐसे अभिकथन का अर्थ यह होना चाहिए कि अनुबंध का अपूर्ण रह जाना वादी की गलती नहीं था।

38. इस मामले में हम इस तथ्य की उपेक्षा नहीं कर सकते कि वाद–वस्तु बेंगलुरु से लगभग 30/40 किलोमीटर दूर स्थित औद्योगिक नगर होसुर में स्थित है। न्यायालय के लिए आवश्यक है कि वह होसुर में अचल संपत्ति के मूल्यों में हुई अभूतपूर्व वृद्धि का न्यायिक संज्ञान ले। यह सिद्धांत ***के.एस. विद्यनादम बनाम वैरवन*** (उपरोक्त) में प्रतिपादित निर्णय से समर्थित है। इस न्यायालय के शब्दों को उद्धृत करते हुए — *"हम वास्तविकता से अनभिज्ञ नहीं रह सकते — और वास्तविकता यह है कि शहरी संपत्तियों के मूल्यों में सतत और निरंतर वृद्धि हो रही है — जिसका कारण ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी केंद्रों की ओर बड़े पैमाने पर जन–स्थानांतरण तथा मुद्रास्फीति है।"*

39. श्री वेंगुपाल ने तर्क दिया कि वादी ने 15,10,000 रुपये के विचारणीय मूल्य में से मात्र 10,001 रुपये की एक नगण्य अग्रिम राशि अदा की थी। इतनी नगण्य राशि अदा

---

13 (1851) 117 ईआर 1229

करने के बाद, वादी विशिष्ट निष्पादन जैसी विवेकाधीन समतामूलक अनुतोष का अधिकारी नहीं था, जैसा कि इस न्यायालय ने ***सरदमणि कंडप्पन बनाम एस. राजलक्ष्मी***[14] में अवलोकित किया है। इस न्यायालय के निर्णय का प्रासंगिक अनुच्छेद नीचे उद्धृत है:—

> *"**37.** इस आर्थिक परिवर्तन से उत्पन्न वास्तविकता को अब विशिष्ट निष्पादन से संबंधित मामलों के निर्णय में अनदेखा नहीं किया जा सकता। मूल्यों में हुई तीव्र वृद्धि ऐसी परिस्थिति है जो उस स्थिति में विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष प्रदान करना अन्यायपूर्ण बना देती है, जहाँ खरीदार ने सहमति-अनुसार निर्धारित अवधि के भीतर विक्रय पूरा करने के लिए आवश्यक कदम नहीं उठाए, और विक्रेता किसी विलंब या अनुपालन-न-होने का उत्तरदायी न रहा हो। अब क्रेता यह शरण नहीं ले सकता कि अचल संपत्ति से संबंधित अनुबंधों में समय को मूल तत्व नहीं माना जाता, ताकि वह अपने विलंब, लापरवाही, उल्लंघन और तैयार न होने को छिपा सके। उस युग के प्रेसीडेंट्स — जब तीव्र मुद्रास्फीति अज्ञात थी — जिनका यह कहना था कि अचल सम्पत्तियों के संबंध में अनुबंधों में समय मूल तत्व नहीं है, अब आवश्यकतः लागू नहीं रह गए हैं; यह इसलिए नहीं कि वहाँ रखा गया सिद्धांत असंवैधानिक या त्रुटिपूर्ण है, बल्कि इसलिए कि जिन परिस्थितियों में वह सिद्धांत विकसित हुआ था वे अब विद्यमान नहीं हैं। आजकल अचल संपत्तियों के मूल्यों में तेज़ी से बढ़ोतरी के समय में यह कहना कि वह विक्रेता जिसने विक्रय मूल्य का लगभग 10% अग्रिम लिया और निष्पादन के लिए तीन-चार महीने सहमत हुआ — इसका अर्थ यह नहीं था कि उसने समय को मूल तत्व नहीं माना — उस विक्रेता के साथ क्रूर मज़ाक होगा और इससे अन्याय होगा। दुःख में वृद्धि उस देरी से भी होती है जो विशिष्ट निष्पादन से संबंधित मुकदमों के निपटारे में होती है, क्योंकि ऐसे वाद और उनसे होने वाली अपीलें रूटीन रूप से दो-तीन दशक ले लेती हैं। नतीजा यह होता है कि कोई स्वामी, जिसने किसी*

---

14 (2011) 12 एससीसी 18

*संपत्ति को एक लाख रुपये में बेचने पर सहमति दी और दस हज़ार रुपये अग्रिम प्राप्त किए, पच्चीस वर्ष बाद शेष नब्बे हज़ार रुपये लेकर विक्रय-विलेख निष्पादित करने के लिए बाध्य हो सकता है, जबकि उस समय संपत्ति का मूल्य एक करोड़ रुपये तक बढ़ चुका होगा।"*

40. जैसा कि श्री वेंगुपाल ने तर्क दिया, यह तथ्य कि वाद तीन वर्षों के पश्चात, सीमा–अवधि की समाप्ति से ठीक पूर्व दायर किया गया था, अचल संपत्ति की खरीद के लिए उत्तरदाता वादी को विशिष्ट निष्पादन की समतामूलक अनुतोष से वंचित करने का एक आधार भी था। श्री वेंगुपाल का यह तर्क इस न्यायालय के निर्णयों— ***पी.आर. देब एंड एसोसिएट्स बनाम सुनन्दा रॉय***[15]; ***के.एस. विद्यनादम बनाम वैरवन***[16]; ***मंजूनाथ आनंदप्पा बनाम तम्मनसा***[17]; ***अज़हर सुल्ताना बनाम बी. राजमणि***[18]; **तथा *सरदमणि कंडप्पन बनाम एस. राजलक्ष्मी***[19] — से समर्थित है।

41. ***के.एस. विद्यनादम बनाम वैरवन*** (उपरोक्त) में इस न्यायालय ने यह प्रतिपादित किया:

*"**10.** भारत में न्यायालयों द्वारा, कुछ प्रारंभिक अंग्रेज़ी निर्णयों का अनुसरण करते हुए, निरंतर यह माना गया है कि अचल संपत्ति से संबंधित विक्रय–सहमति के मामले में, समय अनुबंध का मूल तत्व नहीं होता, जब तक कि इसके विपरीत विशेष रूप से प्रावधान न किया गया हो। परिसीमा अधिनियम द्वारा वाद दायर करने के लिए निर्धारित सीमा–अवधि तीन वर्ष है। इन दो परिस्थितियों से यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि विक्रय–सहमति के प्रत्येक और सभी विशिष्ट निष्पादन के वाद (जिसमें यह विशेष रूप से प्रावधान न हो कि समय अनुबंध का मूल तत्व है) को केवल इस*

---

15 (1996) 4 एससीसी 423

16 (1997) 3 एससीसी 1

17 (2003) 10 एससीसी 390

18 (2009) 17 एससीसी 27

19 (2011) 12 एससीसी 18

*आधार पर डिक्री कर दिया जाए कि वह सीमा–अवधि के भीतर दायर किया गया है— भले ही अनुबंध में किसी एक या दूसरे पक्ष द्वारा किसी कार्य को करने के लिए समय–सीमाएँ निर्धारित की गई हों। ऐसा कहना यह मानने के समान होगा कि अनुबंध में पक्षकारों द्वारा निर्धारित समय–सीमाओं का कोई महत्व या मूल्य नहीं है और वे अर्थहीन हैं। क्या यह कहना युक्तिसंगत होगा कि केवल इसलिए कि समय को अनुबंध का मूल तत्व नहीं बनाया गया है, अनुबंध में निर्दिष्ट समय–सीमाएँ अप्रासंगिक हैं और उन्हें निस्संकोच अनदेखा किया जा सकता है? ऐसा कहना धारा 10 और धारा 20 — दोनों द्वारा न्यायालय को प्रदत्त विवेकाधिकार को भी नकारने के समान होगा। जैसा कि इस न्यायालय की संविधान पीठ ने चंद रानी बनाम कमल रानी [(1993) 1 एस.सी.सी. 519] : (एस.सी.सी. पृ. 528, पैरा 25) में प्रतिपादित किया है—"*

*"... यह स्पष्ट है कि अचल संपत्ति के विक्रय के मामले में यह कोई अनुमान नहीं होता कि समय अनुबंध का मूल तत्व है। भले ही समय को अनुबंध का मूल तत्व न माना गया हो, न्यायालय यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि उसका निष्पादन एक उचित अवधि के भीतर किया जाना है, यदि निम्नलिखित स्थितियाँ स्पष्ट हों: (1) अनुबंध की स्पष्ट शर्तों से; (2) संपत्ति की प्रकृति से; तथा (3) परिवेशी परिस्थितियों से, उदाहरण के लिए, अनुबंध किए जाने के उद्देश्य से।"*

*"दूसरे शब्दों में, न्यायालय को सभी प्रासंगिक परिस्थितियों पर दृष्टि डालनी चाहिए, जिनमें अनुबंध में निर्दिष्ट समय–सीमाएँ भी सम्मिलित हों, और यह निर्धारित करना चाहिए कि क्या विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष प्रदान करने हेतु अपने विवेकाधिकार का प्रयोग किया जाना चाहिए या नहीं..."*

---

*15. (1996) 4 एस.सी.सी. 423*

*16. (1997) 3 एस.सी.सी. 1*

*17. (2003) 10 एस.सी.सी. 390*

*18. (2009) 17 एस.सी.सी. 27*

*19. (2011) 12 एस.सी.सी. 18*

*42.* ***अज़हर सुल्ताना बनाम बी. राजमणि*** *(*उपरोक्त) में इस न्यायालय ने यह प्रतिपादित किया:–

> *"**28.** ... न्यायालय, यह ध्यान में रखते हुए कि वह विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग करता है, इस बात पर भी विचार करने का अधिकारी होगा कि क्या वाद एक उचित समय के भीतर दायर किया गया था। तथापि, उचित समय क्या होगा, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। इस संबंध में कोई कठोर और निश्चित नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता। इस संदर्भ में पक्षकारों का आचरण भी महत्वपूर्ण हो जाता है।"*
>
> *****
>
> *"**35.** अतः, हम इस मत पर हैं कि न्याय के हित की पूर्ति इस बात में होगी कि यह न्यायालय अधिनियम की धारा 20 के अधीन अपने विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने से इंकार करे, और प्रतिवादी को वादी को ₹60,000 की राशि अदा करने का निर्देश दे, जिसमें उसके द्वारा अदा की गई अग्रिम राशि भी सम्मिलित होगी।"*

43. **सरदमणि कंडप्पन** (उपरोक्त) में इस न्यायालय ने पुनः यह प्रतिपादित किया कि — (i) विशिष्ट निष्पादन के वादों में विवेकाधिकार का प्रयोग करते समय, न्यायालयों को यह ध्यान में रखना चाहिए कि जब पक्षकारों ने किसी कार्य को करने या लेन-देन को पूर्ण करने के लिए समय निर्धारित किया है, तो उसका कुछ महत्व अवश्य है और इसलिए निर्धारित समय/अवधि की उपेक्षा नहीं की जा सकती; (ii) यह विचार करते समय कि क्या क्रेता अपने अनुबंधीय दायित्व के निष्पादन के लिए तैयार और इच्छुक था, न्यायालय अधिक

कठोर जाँच और सख़्ती अपनाएँगे; और (iii) प्रत्येक विशिष्ट निष्पादन का वाद केवल इस आधार पर डिक्री किया जाना आवश्यक नहीं है कि वह सीमा-अवधि के भीतर दायर किया गया है, यदि ऐसा करते समय अनुबंध में निर्धारित समय-सीमाओं की उपेक्षा की जाए। न्यायालय ऐसे वादों पर भी असहमति व्यक्त करेंगे जो उल्लंघन/अस्वीकृति के तुरंत बाद दायर नहीं किए गए हों। यह तथ्य कि परिसीमा तीन वर्ष है, इसका यह अर्थ नहीं है कि क्रेता एक या दो वर्ष तक प्रतीक्षा कर वाद दायर करे और विशिष्ट निष्पादन प्राप्त कर ले। तीन वर्ष की अवधि विशेष परिस्थितियों में क्रेता की सहायता के लिए है, जैसे कि जहाँ विचारणीय मूल्य का बड़ा भाग विक्रेता को अदा कर दिया गया हो और आंशिक निष्पादन में कब्जा भी सौंप दिया गया हो, जहाँ समता d क्रेता के पक्ष में स्थानांतरित हो जाती है।

44. ***आत्मा राम बनाम चरणजीत सिंह***[20] में, इस न्यायालय की ओर से बोलते हुए न्यायमूर्ति वी. रामासुब्रमणियन ने निम्नलिखित महत्वपूर्ण अवलोकन किया:–

> *"9. ... याचिकाकर्ता द्वारा 12.11.1996 को विधिक नोटिस जारी करने के बाद, तीन वर्षों की लंबी देरी से (13.10.1999 को) वाद दायर करने के लिए कोई स्पष्टीकरण प्रस्तुत नहीं किया गया। विशिष्ट निष्पादन के वाद में वादी का आचरण अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। कोई व्यक्ति जो 12.11.1996 को तत्परता और इच्छा का दावा करते हुए विधिक नोटिस जारी करता है, परंतु 13.10.1999 को ही वाद संस्थित करता है, वह भी केवल अनिवार्य निषेधाज्ञा की प्रार्थना के साथ और उसी से संबंधित निश्चित न्यायालय शुल्क अदा करते हुए, वह विशिष्ट निष्पादन की विवेकाधीन अनुतोष का अधिकारी नहीं होगा।"*

45. उत्तरदाता वादी ने दिनांकित 13.02.2003 नोटिस तथा अ. सा.2 एवं अ. सा.3 के साक्ष्यों पर यह सिद्ध करने के लिए अवलंबन किया है कि वह सदैव अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तैयार और इच्छुक था। यद्यपि यह सत्य हो सकता है कि

---

20 (2020) 3 एससीसी 311

उत्तरदाता वादी ने शेष विक्रय–विचारणीय राशि 06.04.2010 को न्यायालय में जमा की थी, तथापि यह तथ्य उपेक्षित नहीं किया जा सकता कि उक्त जमा 15.03.2003 — जिस तिथि तक विक्रय संपन्न किया जाना था — के सात वर्ष बाद की गई थी। उत्तरदाता वादी की ओर से इस संबंध में कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है कि वह समय के भीतर शेष विक्रय–विचारणीय राशि का भुगतान करने की स्थिति में था अथवा उसके भुगतान की व्यवस्था करने में सक्षम था। निम्न न्यायालयों ने भी इस महत्वपूर्ण मुद्दे पर निर्णय न देकर केवल यह व्यापक टिप्पणी करते हुए त्रुटि की कि चूँकि उत्तरदाता वादी एक व्यवसायी था, इसलिए उसके पास शेष राशि की व्यवस्था करने के साधन थे। उत्तरदाता वादी की दिनांकित 31.03.2003 बैलेंस शीट का सावधानीपूर्वक अध्ययन यह दर्शाता है कि उसके पास अनुबंध के अपने हिस्से का निर्वहन करने के लिए पर्याप्त धन उपलब्ध नहीं था।

46. यह विधि का स्थिर सिद्धांत है कि विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष प्राप्त करने के लिए वादी को यह सिद्ध करना होता है कि वह प्रारंभ से लेकर वाद के अंतिम निर्णय तक, अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तैयार और इच्छुक था। साक्ष्य प्रस्तुत कर अपनी तत्परता और इच्छा सिद्ध करना वादी का अनिवार्य दायित्व है। यह महत्वपूर्ण पहलू सभी परिस्थितियों को ध्यान में रखकर निर्धारित किया जाना चाहिए, जिनमें धन की उपलब्धता भी सम्मिलित है, और वाद–पत्र में तत्परता और इच्छा का मात्र कथन या अभिकथन पर्याप्त नहीं होता।

47. इस मामले में, उत्तरदाता वादी ठोस साक्ष्य प्रस्तुत कर अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने की अपनी तत्परता तथा इच्छा सिद्ध करने के अपने दायित्व का निर्वहन करने में असफल रहा है। उसकी तत्परता और इच्छा सिद्ध करने हेतु कोई स्वीकार्य साक्ष्य अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं किया गया है। इसके अतिरिक्त, उत्तरदाता वादी की बैलेंस शीट से यह स्पष्ट है कि मार्च, 2003 में उसके पास अनुबंध के अपने हिस्से का निर्वहन करने के लिए पर्याप्त धन उपलब्ध नहीं था। सात वर्ष के पश्चात शेष विचारणीय राशि जमा करना

उत्तरदाता वादी की तत्परता सिद्ध नहीं करता। इस संदर्भ में ***उमाबाई बनाम नीलकंठ धोंडिबा चव्हाण*** (उपरोक्त) पर अवलंबन किया जा सकता है, जिसमें इस न्यायालय ने न्यायमूर्ति एस.बी. सिन्हा के माध्यम से यह प्रतिपादित किया कि न्यायालय में राशि जमा कर देना मात्र इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए पर्याप्त नहीं है कि वादी अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने के लिए तैयार और इच्छुक था। न्यायालय में जमा राशि विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 16(ग) के अर्थ में वादी की तत्परता और इच्छा सिद्ध नहीं करती। निर्णय का प्रासंगिक अंश नीचे पुनरुत्पादित किया गया है:–

> *"**45.** ...अपील स्तर पर वादियों द्वारा न्यायालय में किसी भी राशि का जमा किया जाना मात्र अपने–आप में विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 16(ग) के अर्थ में उनके द्वारा अनुबंध के अपने हिस्से का निष्पादन करने की तत्परता और इच्छा को सिद्ध नहीं करता..."*

48. अतः यह पूर्णतः स्पष्ट है कि उत्तरदाता वादी समझौते के निष्पादन की तिथि से लेकर डिक्री पारित होने की तिथि तक अपने संविदात्मक दायित्व के निर्वहन हेतु अपनी तत्परता एवं इच्छा को सिद्ध करने में विफल रहा है, जो कि विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष प्रदान किए जाने के लिए एक अनिवार्य पूर्व शर्त है। यह न्यायालय पाता है कि उत्तरदाता वादी विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष का हकदार नहीं था।

49. संभव है कि उत्तरदाता वादी अपने संविदात्मक दायित्व के निर्वहन के लिए इच्छुक रहा हो; तथापि, ऐसा प्रतीत होता है कि वह आवश्यक धनराशि के साथ तत्पर नहीं था। वह संभवतः अपने संविदात्मक दायित्व के निर्वहन हेतु समय प्राप्त करने का प्रयास कर रहा था।

50. ***भाव्यनाथ बनाम के.वी. बालन***[21] (उपरोक्त) के वाद में, जिसे श्री राजू द्वारा यह प्रतिपादित करने हेतु उद्धृत किया गया कि उत्तरदाता वादी विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष का

---

21 (2020) 11 एससीसी 790

हकदार था तथा न्यायालयों ने ऐसी अनुतोष विधिपूर्वक प्रदान की थी, वहाँ वादी ने विक्रय विलेख के निष्पादन की अंतिम तिथि के तीन दिन पश्चात ही विशिष्ट निष्पादन हेतु वाद दायर किया था। किन्तु, वर्तमान वाद में उत्तरदाता वादी ने लगभग तीन वर्षों तक प्रतीक्षा की और परिसीमा अवधि की समाप्ति से ठीक पूर्व विशिष्ट निष्पादन हेतु वाद दायर किया। इसके अतिरिक्त, ***भाव्यनाथ बनाम के.वी. बालन*** (उपरोक्त) में वादी ने अपने संविदात्मक दायित्व के निर्वहन हेतु अपनी तत्परता एवं इच्छा सिद्ध करने तथा यह दर्शाने के लिए कि उसके पास अपने दायित्व के निर्वहन हेतु पर्याप्त धनराशि उपलब्ध थी, ठोस एवं विश्वसनीय साक्ष्य प्रस्तुत किए थे। वर्तमान वाद में उत्तरदाता वादी द्वारा न तो अपनी तत्परता सिद्ध करने हेतु और न ही यह प्रदर्शित करने हेतु कि उसके पास अपने संविदात्मक दायित्व के निर्वहन के लिए पर्याप्त धनराशि उपलब्ध थी, कोई ऐसा साक्ष्य प्रस्तुत किया गया है। अतः ***भाव्यनाथ बनाम के.वी. बालन*** (उपरोक्त) का निर्णय उत्तरदाता वादी के लिए किसी प्रकार से सहायक नहीं है।

51. उपर्युक्त विवेचन के आलोक में, यह न्यायालय इस सुस्पष्ट मत पर पहुँचा है कि उत्तरदाता वादी विशिष्ट निष्पादन की अनुतोष का हकदार नहीं था। विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय, दोनों ने ऐसी अनुतोष प्रदान करते समय विधि तथा तथ्यों—दोनों में—त्रुटि की।

52. अपील तदनुसार स्वीकार की जाती है। उच्च न्यायालय का आक्षेपित निर्णय तथा विचारण न्यायालय का निर्णय एवं डिक्री तदनुसार निरस्त कर दिए जाते हैं। अपीलकर्ता उत्तरदाता वादी को आज से चार सप्ताह के भीतर बयाना राशि जमा करने की तिथि से वापसी की तिथि तक 7% प्रति वर्ष की दर से ब्याज सहित वापस करेंगे। उत्तरदाता वादी को यह भी स्वतंत्रता होगी कि वह न्यायालय में जमा शेष विचारणीय राशि, यदि कोई हो वापस ले सके। पक्षकार अपने-अपने खर्च वहन करेंगे।

दिव्या पांडे अपील स्वीकार की गई।

(सहायता : दीपक पंवार, एल.सी.आर.ए. द्वारा)

**खंडन (डिस्क्लेमर) - स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।**